दादा भगवान कथित

# सेवा-परोपकार

आप अपने फल दूसरों को दोगे तो कुदरत आपका सब संभाल लेगी।

दादा भगवान कथित

# सेवा-परोपकार

मूल गुजराती संकलन : डॉ. नीरू बहन अमीन

अनुवाद : महात्मागण

**प्रकाशक** : अजीत सी. पटेल
दादा भगवान विज्ञान फाउन्डेशन
1, वरूण अपार्टमेन्ट, 37, श्रीमाली सोसायटी,
नवरंगपुरा पुलिस स्टेशन के सामने,
नवरंगपुरा, अहमदाबाद - 380009,
Gujarat, India.
**फोन :** +91 79 3500 2100

© Dada Bhagwan Foundation,
5, Mamta Park Society, B\h. Navgujarat College,
Usmanpura, Ahmedabad -380014, Gujarat, India.
**Email :** info@dadabhagwan.org
**Tel :** + 91 79 3500 2100

**All Rights Reserved. No part of this publication may be shared, copied, translated or reproduced in any form (including electronic storage or audio recording) without written permission from the holder of the copyright. This publication is licensed for your personal use only.**

**प्रथम संस्करण** : 3,000 प्रतियाँ फरवरी, 2010
**रीप्रिन्ट** : 18,000 प्रतियाँ अप्रैल, 2010 से सितम्बर, 2016
**नयी रीप्रिन्ट** : 5,000 प्रतियाँ मार्च, 2017

**भाव मूल्य** : 'परम विनय' और 'मैं कुछ भी जानता नहीं', यह भाव!

**द्रव्य मूल्य** : 15 रुपए

**मुद्रक** : अंबा मल्टीप्रिन्ट
B-99, इलेक्ट्रॉनिक्स GIDC,
क-6 रोड, सेक्टर-25,
गांधीनगर-382044.
Gujarat, India.
**फोन :** +91 79 3500 2142

# त्रिमंत्र

नमो अरिहंताणं
नमो सिद्धाणं
नमो आयरियाणं
नमो ऊवज्झायाणं
नमो लोए सव्वसाहूणं
एसो पंच नमुक्कारो
सव्व पावप्पणासणो
मंगलाणं च सव्वेसिं
पढमं हवइ मंगलं ॥ १ ॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ २ ॥
ॐ नमः शिवाय ॥ ३ ॥
जय सच्चिदानंद

# 'दादा भगवान' कौन?

जून 1958 की एक संध्या का करीब छः बजे का समय, भीड़ से भरा सूरत शहर का रेल्वे स्टेशन, प्लेटफार्म नं. 3 की बेंच पर बैठे श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल रूपी देहमंदिर में कुदरती रूप से, अक्रम रूप में, कई जन्मों से व्यक्त होने के लिए आतुर 'दादा भगवान' पूर्ण रूप से प्रकट हुए और कुदरत ने सर्जित किया अध्यात्म का अद्‌भुत आश्चर्य। एक घंटे में उन्हें विश्वदर्शन हुआ। 'मैं कौन? भगवान कौन? जगत् कौन चलाता है? कर्म क्या? मुक्ति क्या?' इत्यादि जगत् के सारे आध्यात्मिक प्रश्नों के संपूर्ण रहस्य प्रकट हुए। इस तरह कुदरत ने विश्व के सम्मुख एक अद्वितीय पूर्ण दर्शन प्रस्तुत किया और उसके माध्यम बने श्री अंबालाल मूलजी भाई पटेल, गुजरात के चरोतर क्षेत्र के भादरण गाँव के पाटीदार, कॉन्ट्रैक्ट का व्यवसाय करनेवाले, फिर भी पूर्णतया वीतराग पुरुष!

'व्यापार में धर्म होना चाहिए, धर्म में व्यापार नहीं', इस सिद्धांत से उन्होंने पूरा जीवन बिताया। जीवन में कभी भी उन्होंने किसीके पास से पैसा नहीं लिया बल्कि अपनी कमाई से भक्तों को यात्रा करवाते थे।

उन्हें प्राप्ति हुई, उसी प्रकार केवल दो ही घंटों में अन्य मुमुक्षुजनों को भी वे आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे, उनके अद्‌भुत सिद्ध हुए ज्ञानप्रयोग से। उसे अक्रम मार्ग कहा। अक्रम, अर्थात् बिना क्रम के, और क्रम अर्थात् सीढ़ी दर सीढ़ी, क्रमानुसार ऊपर चढ़ना। अक्रम अर्थात् लिफ्ट मार्ग, शॉर्ट कट।

वे स्वयं प्रत्येक को 'दादा भगवान कौन?' का रहस्य बताते हुए कहते थे कि ''यह जो आपको दिखते हैं वे दादा भगवान नहीं हैं, वे तो 'ए.एम.पटेल' हैं। हम ज्ञानीपुरुष हैं और भीतर प्रकट हुए हैं, वे 'दादा भगवान' हैं। दादा भगवान तो चौदह लोक के नाथ हैं। वे आप में भी हैं, सभी में हैं। आपमें अव्यक्त रूप में रहे हुए हैं और 'यहाँ' हमारे भीतर संपूर्ण रूप से व्यक्त हुए हैं। दादा भगवान को मैं भी नमस्कार करता हूँ।''

# निवेदन

ज्ञानी पुरुष संपूज्य दादा भगवान के श्रीमुख से अध्यात्म तथा व्यवहारज्ञान से संबंधित जो वाणी निकली, उसको रिकॉर्ड करके, संकलन तथा संपादन करके पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया जाता है। विभिन्न विषयों पर निकली सरस्वती का अद्‌भुत संकलन इस पुस्तक में हुआ है, जो नए पाठकों के लिए वरदान रूप साबित होगा।

प्रस्तुत अनुवाद में यह विशेष ध्यान रखा गया है कि वाचक को दादाजी की ही वाणी सुनी जा रही है, ऐसा अनुभव हो, जिसके कारण शायद कुछ जगहों पर अनुवाद की वाक्य रचना हिन्दी व्याकरण के अनुसार त्रुटिपूर्ण लग सकती है, लेकिन यहाँ पर आशय को समझकर पढ़ा जाए तो अधिक लाभकारी होगा।

प्रस्तुत पुस्तक में कई जगहों पर कोष्ठक में दर्शाए गए शब्द या वाक्य परम पूज्य दादाश्री द्वारा बोले गए वाक्यों को अधिक स्पष्टतापूर्वक समझाने के लिए लिखे गए हैं। जबकि कुछ जगहों पर अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी अर्थ के रूप में रखे गए हैं। दादाश्री के श्रीमुख से निकले कुछ गुजराती शब्द ज्यों के त्यों *इटालिक्स* में रखे गए हैं, क्योंकि उन शब्दों के लिए हिन्दी में ऐसा कोई शब्द नहीं है, जो उसका पूर्ण अर्थ दे सके। हालांकि उन शब्दों के समानार्थी शब्द अर्थ के रूप में, कोष्ठक में और पुस्तक के अंत में भी दिए गए हैं।

ज्ञानी की वाणी को हिन्दी भाषा में यथार्थ रूप से अनुवादित करने का प्रयत्न किया गया है किन्तु दादाश्री के आत्मज्ञान का सही आशय, ज्यों का त्यों तो, आपको गुजराती भाषा में ही अवगत होगा। जिन्हें ज्ञान की गहराई में जाना हो, ज्ञान का सही मर्म समझना हो, वह इस हेतु गुजराती भाषा सीखें, ऐसा हमारा अनुरोध है।

अनुवाद से संबंधित कमियों के लिए आपसे क्षमाप्रार्थी हैं।

❖❖❖❖❖

# संपादकीय

ये मन-वचन-काया दूसरों के सुख के लिए खर्च करें तो खुद को संसार में कभी भी सुख की कमी नहीं पड़ती। और अपने खुद का-सेल्फ का रियलाइज़ेशन करें, उसे सनातन सुख की प्राप्ति होती है। मनुष्य जीवन का ध्येय इतना ही है। इस ध्येय के रास्ते पर यदि चलने लगें तो मनुष्यपन में ही जीवनमुक्त दशा की प्राप्ति होगी। उससे आगे फिर इस जीवन में कोई भी प्राप्ति बाकी नहीं रहती।

आम का पेड़ खुद के कितने आम खा जाता होगा? उसके फल, लकड़ी, पत्ते आदि सब दूसरों के लिए ही काम आते हैं न? उसके फल स्वरूप वह ऊर्ध्वगति प्राप्त करता रहता है। धर्म की शुरुआत ही ओब्लाइजिंग नेचर (परोपकारी स्वभाव) से होती है। दूसरों को कुछ भी देतें हैं, तब से ही खुद को आनंद शुरू होता है।

परम पूज्य दादा श्री एक ही वाक्य में कहते हैं कि माँ-बाप की जो बच्चे सेवा करते हैं, उन्हें कभी पैसों की कमी नहीं आती, उनकी ज़रूरतें सब पूरी होती हैं, और आत्म साक्षात्कारी गुरु की सेवा करे, वह मोक्ष में जाता है।

दादा श्री ने अपनी पूरी ज़िन्दगी में यही ध्येय रखा था कि मुझे जो कोई मिला, उसे सुख प्राप्त होना ही चाहिए। अपने सुख के लिए विचार तक नहीं किया। पर सामनेवाले को क्या अड़चन है, उसकी अड़चन कैसे दूर हो, उस भावना में ही निरंतर रहते थे। तभी उनमें कारुण्यता प्रकट हुई थी। अद्‌भुत अध्यात्म विज्ञान प्रकट हुआ था।

प्रस्तुत संकलन में दादाश्री तमाम दृष्टिकोण से जीवन का ध्येय किस प्रकार सिद्ध करें, जो सेवा-परोपकार सहित हो, उसकी समझ सरल-सचोट दृष्टांतो द्वारा फिट करवाते हैं। जिन्हें जीवन में ध्येय रूप में आत्मसात् कर लें, तो मनुष्यपन की सार्थकता हुई कहलाएगी।

**- डॉ. नीरु बहन अमीन के जय सच्चिदानंद**

# सेवा-परोपकार

## मनुष्य जन्म की विशेषता

**प्रश्नकर्ता :** यह मनुष्य अवतार व्यर्थ नहीं जाए, उसके लिए क्या करना चाहिए?

**दादाश्री :** यह मनुष्य अवतार व्यर्थ नहीं जाए, उसी का सारे दिन चिंतन करें तो वह सफल होगा। इस मनुष्य अवतार की चिंता करनी है, वहाँ लोग लक्ष्मी की चिंता करते हैं! कोशिश करना आपके हाथ में नहीं है, पर भाव करना आपके हाथ में है! कोशिश करना दूसरों की सत्ता में है। भाव का फल आता है। वास्तव में तो भाव भी परसत्ता है, लेकिन भाव करें तो उसका फल आता है।

**प्रश्नकर्ता :** मनुष्य जन्म की विशेषता क्या है?

**दादाश्री :** मनुष्य जीवन परोपकार के लिए है और हिन्दुस्तान के मनुष्यों का जीवन 'एब्सोल्युटीज़म' के लिए, मुक्ति के लिए है। हिन्दुस्तान के अलावा बाहर अन्य देशों में जो जीवन है, वह परोपकार के लिए है। परोपकार अर्थात् मन का उपयोग भी औरों के लिए करना, वाणी का भी औरों के लिए उपयोग करना और वर्तन का उपयोग भी औरों के लिए करना! मन-वचन-काया से परोपकार करना। तब कहेंगे, मेरा क्या होगा? वह परोपकार करे तो उसके घर में क्या रहेगा?

**प्रश्नकर्ता :** लाभ तो मिलेगा ही न?

**दादाश्री :** हाँ, लेकिन लोग तो ऐसा ही समझते हैं न कि मैं दूँगा तो मेरा चला जाएगा।

**प्रश्नकर्ता :** निचली कक्षा के लोग हों, वे ऐसा मानते हैं।

**दादाश्री :** उच्च कक्षावाला ऐसा मानता है कि दूसरों को दिया जा सकता है।

## जीवन परोपकार के लिए...

इसका गुह्य साइन्स क्या है कि मन-वचन-काया परोपकार में लगा दें, तो आपके यहाँ हर एक चीज़ होगी। परोपकार के लिए करो, और यदि फ़ीस लेकर करो तो?

**प्रश्नकर्ता :** तकलीफ पैदा होगी।

**दादाश्री :** यह कोर्ट में फ़ीस लेते हैं। सौ रुपये होंगे, डेढ़ सौ रुपये देने होंगे। तब कहेंगे, 'साहब, डेढ़ सौ ले लो'। पर परोपकार का कानून तो नहीं लगता न!

**प्रश्नकर्ता :** पेट में आग लगी हो तो ऐसा कहना ही पड़ता है न?

**दादाश्री :** ऐसा विचार करना ही मत। किसी भी तरह का परोपकार करोगे न तो आपको कोई अड़चन नहीं आएगी, अब लोगों को क्या होता है? अब अधूरा समझकर करने जाते हैं, इसलिए उलटा 'इफेक्ट' आता है। इसलिए फिर मन में श्रद्धा नहीं बैठती और उठ जाती है। आज करना शुरू करें, तब दो-तीन अवतार में ठिकाने लगे वह। यही 'साइन्स' है।

## अच्छे-बुरे के लिए, परोपकार एक-सा

**प्रश्नकर्ता :** मनुष्य अच्छे भले के लिए परोपकारी जीवन जीता है, लोगों से कहता भी है, लेकिन वह जो अच्छे के लिए कहता है, उसे लोग 'मेरे खुद के भले के लिए कहता है', ऐसा समझने के लिए कोई तैयार नहीं, उसका क्या?

**दादाश्री :** ऐसा है, परोपकार करनेवाला सामनेवाले की समझ देखता

नहीं है और यदि परोपकार करनेवाला सामनेवाले की समझ देखे तो वह वकालत कहलाती है। इसलिए सामनेवाले की समझ देखनी ही नहीं चाहिए।

ये पेड़ होते हैं न सभी, आम हैं, नीम हैं वे सभी, उन पर फल आते हैं, तब आम का पेड़ अपने कितने आम खाता होगा?

**प्रश्नकर्ता :** एक भी नहीं।

**दादाश्री :** किसके लिए हैं वे?

**प्रश्नकर्ता :** दूसरों के लिए।

**दादाश्री :** हाँ, तब क्या वे यह देखते हैं कि यह लुच्चा है कि भला है? ऐसा देखते हैं? जो ले जाए उसके, मेरे नहीं। वह परोपकारी जीवन जीता है। ऐसा जीवन जीने से उन जीवों की धीरे-धीरे ऊर्ध्वगति होती है।

**प्रश्नकर्ता :** पर कई बार जिसके ऊपर उपकार होता है, वह व्यक्ति उपकार करनेवाले पर दोषारोपण करता है।

**दादाश्री :** हाँ, देखने का वही है न! वह जो उपकार करता है न, उसके ऊपर भी अपकार करता है।

**प्रश्नकर्ता :** नासमझी के कारण!

**दादाश्री :** यह समझ वह कहाँ से लाए? समझ हो तो काम हो जाए न! समझ ऐसी लाए कहाँ से?

परोपकार, यह तो बहुत ऊँची स्थिति है। यह परोपकारी लाइफ, सारे मनुष्य जीवन का ध्येय ही यह है!

## जीवन में, महत् कार्य ये दो ही

और दूसरा, इस हिन्दुस्तान के मनुष्य का अवतार किसलिए है? अपना यह बंधन, कायमी बंधन टूटे इस हेतु के लिए है, 'एब्सोल्यूट'

होने के लिए है और यदि यह 'एब्सोल्यूट' होने का ज्ञान प्राप्त नहीं हो, तो तू दूसरों के लिए जीना। ये दो ही कार्य करने के लिए हिन्दुस्तान में जन्म है। ये दो कार्य लोग करते होंगे? लोगों ने तो मिलावट करके मनुष्य में से जानवर में जाने की कला खोज निकाली है।

## सरलता के उपाय

**प्रश्नकर्ता :** जीवन सात्विक और सरल बनाने के क्या उपाय हैं?

**दादाश्री :** तेरे पास जितना हो उतना ओब्लाइज नेचर रखकर लोगों को देता रह। ऐसे ही जीवन सात्विक होता जाएगा। ओब्लाइजिंग नेचर किया है तूने? तुझे ओब्लाइजिंग नेचर अच्छा लगता है?

**प्रश्नकर्ता :** कुछ अंश तक किया है!

**दादाश्री :** उसे अधिक अंश में करें, तो अधिक फायदा होगा। ओब्लाइज ही करते रहना। किसी के लिए फेरा लगाकर, चक्कर लगाकर, पैसे देकर, किसी दु:खी को दो कपड़े सिलवा दें, ऐसे ओब्लाइज करना।

भगवान कहते हैं कि मन-वचन-काया और आत्मा (प्रतिष्ठित आत्मा) का उपयोग दूसरों के लिए करना। फिर तुझे कोई भी दु:ख आए तो मुझे बताना।

धर्म की शुरुआत ही 'ओब्लाइजिंग नेचर' से होती है। आप अपने घर का दूसरों को दो, वहीं आनंद है। तब लोग ले लेना सीखते हैं! आप अपने लिए कुछ भी मत करना। लोगों के लिए ही करना तो अपने लिए कुछ भी करना नहीं पड़ेगा।

## भाव में तो सौ प्रतिशत

ये कोई पेड़ अपने फल खुद खाता है? नहीं! इसलिए ये पेड़ मनुष्य को उपदेश देते हैं कि आप अपने फल दूसरों को दो। आपको कुदरत

देगी। नीम कड़वा ज़रूर लगता है, लेकिन लोग उगाते हैं ज़रूर। क्योंकि उसके दूसरे लाभ हैं। वर्ना पौधा उखाड़ ही डालते। पर वह दूसरी तरह से लाभकारी है। वह ठंडक देता है, उसकी दवाई हितकारी है, उसका रस हितकारी है। सत्युग में लोग सामनेवाले को सुख पहुँचाने का ही प्रयोग करते थे। सारा दिन 'किसे ओब्लाइज करूँ' ऐसे ही विचार आते।

बाहर कम हो तो हर्ज नहीं, लेकिन अपना अंदर का भाव तो होना ही चाहिए कि मेरे पास पैसे हैं, तो मुझे किसी का दुःख कम करना है। अक़्ल हो, तो मुझे अक़्ल से किसी को समझाकर भी उसका दुःख कम करना है। खुद के पास जो सिलक बाकी हो उससे हेल्प करना, या तो ओब्लाइजिंग नेचर तो रखना ही। ओब्लाइजिंग नेचर यानी क्या? दूसरों के लिए करने का स्वभाव!

ओब्लाइजिंग नेचर हो, तो कितना अच्छा स्वभाव होता है! पैसे देना ही ओब्लाइजिंग नेचर नहीं है। पैसे तो हमारे पास हों या न भी हों लेकिन हमारी इच्छा, ऐसी भावना हो कि इसे किस प्रकार हेल्प करूँ। हमारे घर कोई आया हो तो, उसकी कैसे कुछ मदद करूँ, ऐसी भावना होनी चाहिए। पैसे देने या नहीं देने, वह आपकी शक्ति के अनुसार है।

पैसों से ही ओब्लाइज किया जाए ऐसा कुछ नहीं है, वह तो देनेवाले की शक्ति पर निर्भर करता है। मन में सिर्फ भाव रखना है कि किस तरह 'ओब्लाइज' करूँ? इतना ही रहा करे, उतना देखना है।

## जीवन का ध्येय

जिससे कुछ भी अपने ध्येय की तरफ पहुँच सके। यह बिना ध्येय के जीवन का तो कोई अर्थ ही नहीं है। डॉलर आते हैं और खा-पीकर मज़े उड़ाते हैं और सारा दिन चिंता-वरीज़ करते रहते हैं, इसे जीवन का ध्येय कैसे कहा जाएगा? मनुष्यपना मिला, वह व्यर्थ जाए, उसका क्या अर्थ है? इसलिए, मनुष्यपना मिलने के बाद अपने ध्येय तक पहुँचने के

लिए क्या करना चाहिए? संसार के सुख चाहिए, भौतिक सुख, तो आपके पास जो कुछ हो वह दो लोगों को। कुछ भी सुख लोगों को दो, तो आप सुख की आशा कर सकते हो। नहीं तो सुख आपको मिलेगा नहीं और यदि दु:ख दिया तो आपको दु:ख मिलेगा।

इस दुनिया का कानून एक ही वाक्य में समझ जाओ, इस संसार के सारे धर्मों का, कि जिस व्यक्ति को सुख चाहिए, वह दूसरे जीवों को सुख दे और दु:ख चाहिए तो दु:ख दे। जो अनुकूल आए वह दे। अब अगर कोई पूछे कि 'हम लोगों को सुख कैसे दें? हमारे पास पैसे नहीं हैं।' तो ऐसा नहीं है कि पैसों से ही दे सकते हैं। उसके प्रति ओब्लाइजिंग नेचर रख सकते हैं, उसके लिए चक्कर लगा सकते हैं, उसे सलाह दे सकते हैं, कई तरह से ओब्लाइज कर सकते हैं, ऐसा है।

धर्म क्या है? भगवान की मूर्तियों के पास बैठे रहना, उसे धर्म नहीं कहते। धर्म तो, अपने ध्येय तक पहुँचना, उसे धर्म कहते हैं। साथ-साथ एकाग्रता के लिए हम कोई भी साधन करें, वह अलग बात है, पर इसमें एकाग्रता करो तो सब एकाग्र ही है इसमें। ओब्लाइजिंग नेचर रखो, तय करो कि अब मुझे लोगों को ओब्लाइज ही करना है अब। तो आपमें परिवर्तन आ जाएगा। निश्चित करो कि मुझे वाईल्डनेस (जंगलीपन)नहीं करनी है।

सामनेवाला वाईल्ड (जंगली) हो जाए, फिर भी मुझे नहीं होना है, तो ऐसा हो सकता है। नहीं हो सकता? निश्चित करो तब से थोड़ा-थोड़ा परिवर्तन होगा या नहीं होगा?

**प्रश्नकर्ता :** लेकिन मुश्किल है।

**दादाश्री :** ना! मुश्किल हो, फिर भी तय करो न, क्योंकि आप मनुष्य हो और भारत देश के मनुष्य हो। क्या ऐसे-वैसे हो? ऋषि-मुनियों के पुत्र हो आप! आपमें ज़बरदस्त शक्तियाँ हैं। लेकिन वे आवृत हैं तो वे आपके क्या काम आएँगी? इसलिए यदि आप मेरे इस शब्द के अनुसार

तय करो कि मुझे यह करना ही है, तो वह अवश्य फलेगी, वर्ना ऐसे वाईल्डनेस कब तक करते रहोगे? और आपको सुख नहीं मिल पाता। क्या वाईल्डनेस में सुख मिलता है?

**प्रश्नकर्ता :** ना।

**दादाश्री :** उलटे दु:ख ही निमंत्रित करते हो।

## परोपकार से पुण्य साथ में

जब तक मोक्ष ना मिले, तब तक पुण्य अकेला ही मित्र समान काम करता है और पाप दुश्मन के समान काम करता है। अब आपको दुश्मन रखना है या मित्र रखना है? वह आपको जो अच्छा लगे, उसके अनुसार निश्चित करना है। और मित्र का संयोग कैसे मिले, वह पूछ लेना और दुश्मन का संयोग कैसे जाए, वह भी पूछ लेना। यदि दुश्मन पसंद हो तो उसका संयोग कैसे मिले, यह पूछे, तो हम उसे कहेंगे कि जितना चाहे उतना उधार करके घी पीना, चाहे जहाँ भटकना, और तुझे ठीक लगे वैसे मज़े उड़ाना, फिर आगे जो होगा देखा जाएगा! और पुण्यरूपी मित्र चाहिए तो हम बता दें कि भाई इस पेड़ के पास से सीख ले। कोई वृक्ष अपना फल खुद खा जाता है? कोई गुलाब अपना फूल खा जाता होगा? थोड़ा सा तो खाता होगा, नहीं? हम नहीं हों तब रात को खा जाता होगा, नहीं? नहीं खा जाता?

**प्रश्नकर्ता :** नहीं खाता।

**दादाश्री :** ये पेड़-पौधे तो मनुष्यों को फल देने के लिए मनुष्यों की सेवा में हैं। अब पेड़ों को क्या मिलता है? उनकी ऊर्ध्वगति होती है और मनुष्य आगे बढ़ते हैं उनकी हेल्प लेकर! ऐसा मानो कि, हमने आम खाया, उसमें आम के पेड़ का क्या गया? और हमें क्या मिला? हमने आम खाया, इसलिए हमें आनंद हुआ। उससे हमारी वृत्तियाँ जो बदलीं, उससे हम सौ रुपये जितना अध्यात्म में कमाते हैं। अब आम खाया, इसलिए उसमें से पाँच प्रतिशत आम के पेड़ को आपके हिस्से में से

जाता है और पँचानवे प्रतिशत आपके हिस्से में रहता है। वे लोग हमारे हिस्से में से पाँच प्रतिशत ले लेते हैं और वे बेचारे ऊँची गति में जाते हैं और हमारी अधोगति नहीं होती है, हम भी आगे बढ़ते हैं। इसलिए ये पेड़ कहते हैं कि हमारा सबकुछ भोगो, हर एक प्रकार के फल-फूल भोगो।

## योग उपयोग परोपकाराय

इसलिए यह संसार आपको पुसाता हो, संसार आपको पसंद हो, संसार की चीज़ों की इच्छा हो, संसार के विषयों की वांछना हो तो इतना करो, 'योग उपयोग परोपकाराय।' योग यानी ये मन-वचन-काया का योग, और उपयोग यानी बुद्धि का उपयोग, मन का उपयोग करना, चित्त का उपयोग करना, इन सभी का उपयोग दूसरों के लिए करना और यदि दूसरों के लिए खर्च नहीं किया, तो हमारे लोग आखिर में घरवालों के लिए भी खर्च करते हैं न? इस कुतिया को खाने का क्यों मिलता है? जिन बच्चों के भीतर भगवान रहे हैं, उन बच्चों की वह सेवा करती है। इसलिए उसे सब मिल जाता है। इस आधार पर सारा संसार चल रहा है। इस पेड़ को खुराक कहाँ से मिलती है? इन पेड़ों ने कोई पुरुषार्थ किया है? वे तो ज़रा भी 'इमोशनल' नहीं हैं। वे कभी 'इमोशनल' होते हैं? वे तो कभी आगे-पीछे होते ही नहीं। उन्हें कभी ऐसा होता नहीं कि यहाँ से एक मील दूर विश्वामित्री नदी है, तो वहाँ जाकर पानी पी आऊँ!

प्रामाणिकता और पारस्परिक 'ओब्लाइजिंग नेचर'। बस, इतना ही ज़रूरी है। पारस्परिक उपकार करना, इतना ही मनुष्य जीवन की बड़ी उपलब्धि है! इस संसार में दो प्रकार के लोगों को चिंता मिटती है, एक ज्ञानीपुरुष को और दूसरे परोपकारी को।

## परोपकार की सच्ची रीति

**प्रश्नकर्ता :** इस संसार में अच्छे कृत्य कौन से कहलाते हैं? उसकी परिभाषा दी जा सकती है?

**दादाश्री :** हाँ, अच्छे कृत्य तो ये सभी पेड़ करते हैं। वे बिल्कुल अच्छे कृत्य करते हैं। लेकिन वे खुद कर्त्ता भाव में नहीं हैं। ये पेड़ जीवित हैं। सभी दूसरों के लिए अपने फल देते हैं। आप अपने फल दूसरों को दे दो। आपको अपने फल मिलते रहेंगे। आपके जो फल उत्पन्न हों-दैहिक फल, मानसिक फल, वाचिक फल, 'फ्री ऑफ कॉस्ट' लोगों को देते रहो तो आपको आपकी हर एक चीज़ मिल जाएगी। आपकी जीवन की ज़रूरतों में किंचित् मात्र अड़चन नहीं आएगी और जब आप खुद वे फल खा जाओगे तो अड़चन आएगी। यदि आम का पेड़ अपने फल खुद खा जाए तो उसका जो मालिक होगा, वह क्या करेगा? उसे काट देगा न? इसी तरह ये लोग अपने फल खुद खा जाते हैं। इतना ही नहीं ऊपर से फ़ीस माँगते हैं।

एक अर्ज़ी लिखने के बाईस रुपये माँगते हैं! जिस देश में 'फ्री ऑफ कोस्ट' वकालत करते थे और ऊपर से अपने घर भोजन करवाकर वकालत करते थे, वहाँ यह दशा हुई है। यदि गाँव में झगड़ा हुआ हो, तो नगरसेठ उन दो झगड़ने वालों से कहते, 'भैया चंदू भाई, आज साढ़े दस बजे आप घर पर आना और नगीनदास, आप भी उसी समय घर पर आना।' और नगीनदास की जगह यदि कोई मज़दूर होता या किसान होता, जो लड़ रहे होते तो उनको घर बुला लेता। दोनों को बिठाकर, दोनों को सहमत करवा देता। जिसके पैसे चुकाने हों, उसे थोड़े नक़द दिलवाकर, बाकी के किश्तों में देने की व्यवस्था करवा देता। फिर दोनों से कहता, 'चलो, मेरे साथ भोजन करने बैठ जाओ।' दोनों को खाना खिलाकर घर भेज देता। हैं आज ऐसे वकील? इसलिए समझो और समय को पहचानकर चलो। और यदि खुद, खुद के लिए ही करता है, तो मरते समय दुःखी होता है। जीव निकलता नहीं और बंगले-मोटर छोड़कर जा नहीं पाता!

उनसे सलाह के पैसे माँगते नहीं थे। ऐसा-वैसा करके निबटा देते। खुद घर के दो हज़ार देते थे। और आज सलाह लेने गया हो तो सलाह की फ़ीस के सौ रुपये ले लेंगे। 'अरे, जैन हो आप', तब कहे, 'जैन तो हैं लेकिन धंधा चाहिए या नहीं चाहिए हमें? साहेब, सलाह की भी

फ़ीस? और आप जैन? भगवान को भी शर्मिंदा किया? वीतरागों को भी शर्मिंदा किया? नो-हाउ की फ़ीस? यह तो कैसा तूफ़ान कहलाए?'

**प्रश्नकर्ता :** यह अतिरिक्त बुद्धि की फ़ीस, ऐसा कहते हो न?

**दादाश्री :** क्योंकि बुद्धि का विरोध नहीं है। यह बुद्धि, विपरीत बुद्धि है। खुद का ही नुकसान करनेवाली बुद्धि है। विपरीत बुद्धि! भगवान ने बुद्धि के लिए विरोध नहीं किया। भगवान कहते हैं, सम्यक् बुद्धि भी हो सकती है। वह बुद्धि बढ़ गई हो, तो मन में ऐसा होता है कि किस-किस का निकाल करके दूँ, किस-किस की हेल्प करूँ? किस-किस को सर्विस नहीं है, उसे सर्विस मिले ऐसा कर दूँ।

## ओब्लाइजिंग नेचर

**प्रश्नकर्ता :** अब मेरी दृष्टि से कहता हूँ कि अब एक कुत्ता हो, वह किसी कबूतर को मारे और हम बचाने जाएँ तो मेरी दृष्टि से हमने ओब्लाइज किया, तो वह तो हम व्यवस्थित के बीच में आए न?

**दादाश्री :** वह ओब्लाइज होगा ही कब? जब उसका 'व्यवस्थित' हो तभी होगा हमसे, नहीं तो होगा ही नहीं। हमें ओब्लाइजिंग नेचर रखना है। उससे सारे पुण्य ही बंधेंगे, इसलिए दु:ख उत्पन्न होने का साधन ही नहीं रहा। पैसों से नहीं हो सके तो, फेरा लगाकर या बुद्धि के द्वारा, समझाकर भी, चाहे किसी भी रास्ते ओब्लाइज करना।

## परोपकार, परिणाम में लाभ ही

और यह लाइफ यदि परोपकार के लिए जाएगी तो आपको कोई भी कमी नहीं रहेगी। किसी तरह की आपको अड़चन नहीं आएगी। आपकी जो-जो इच्छाएँ हैं, वे सभी पूरी होगी और ऐसे उछल-कूद करोगे तो एक भी इच्छा पूरी नहीं होगी। क्योंकि वह रीति, आपको नींद ही नहीं आने देगी। इन सेठों को तो नींद ही नहीं आती है, तीन-तीन, चार-चार दिन तक सो ही नहीं पाते, क्योंकि लूटपाट ही की है जिसकी-तिसकी।

इसलिए, ओब्लाइजिंग नेचर किया कि राह चलते-चलते, यहाँ पड़ोस में किसी को पूछते जाएँ कि भैया, मैं पोस्ट ऑफिस जा रहा हूँ। आपको कोई ख़त पोस्ट करना है? लेकिन ऐसे पूछते-पूछते जाने में क्या हर्ज है? कोई कहे कि मुझे तुझ पर विश्वास नहीं आता। तब कहें, भैया, पैर पड़ता हूँ। लेकिन जिन्हें विश्वास आता है, उनका तो ले जाएँ।

यह तो मैं वह बता हूँ जो मेरा बचपन का गुण था, ओब्लाइजिंग नेचर! और पच्चीस साल की उम्र में मेरा सारा फ्रेन्ड सर्कल मुझे सुपर ह्युमन कहता था।

ह्युमन कौन कहलाता है कि जो ले-दे, समान भाव से व्यवहार करे। सुख दिया हो, उसे सुख दे। दुःख दिया हो, उसे दुःख न दे। ऐसा सब व्यवहार करे, वह मनुष्यपना कहलाता है।

इसीलिए जो सामनेवाले का सुख ले लेता है, वह पाशवता में जाता है। जो खुद सुख देता है और सुख लेता है, ऐसा मानवीय व्यवहार करता है, वह मनुष्य में रहता है और जो खुद का सुख दूसरों को भोगने के लिए दे देता है, वह देवगति में जाता है, सुपर ह्युमन। खुद का सुख दूसरों को दे दे, किसी दुःखी को, वह देवगति में जाता है।

## उसमें इगोइज़म नोर्मल

**प्रश्नकर्ता :** परोपकार के साथ 'इगोइज़म' की संगति होती है?

**दादाश्री :** हमेशा परोपकार जो करता है, उसका 'इगोइज़म' नोर्मल ही होता है। उसका 'इगोइज़म' वास्तविक होता है और जो कोर्ट में डेढ़ सौ रुपये फ़ीस लेकर दूसरों का काम करते हों, उनका 'इगोइज़म' बहुत बढ़ा हुआ होता है।

इस संसार का कुदरती नियम क्या है कि आप अपने फल दूसरों को देंगे तो कुदरत आपका चला लेगी। यही गुह्य साइन्स है। यह परोक्ष

धर्म है। बाद में प्रत्यक्ष धर्म आता है, आत्मधर्म अंत में आता है। मनुष्य जीवन का हिसाब इतना ही है! अर्क़ इतना ही है कि मन-वचन-काया का उपयोग दूसरों के लिए करो।

## नया ध्येय आज का, रिएक्शन पिछले

**प्रश्नकर्ता :** तो परोपकार के लिए ही जीना चाहिए?

**दादाश्री :** हाँ, परोपकार के लिए ही जीना चाहिए। लेकिन अब यदि तुरंत ही आप ऐसे लाइन बदल लोगे तो ऐसा करते समय पिछले रिएक्शन तो आएँगे ही, तब फिर आप परेशान हो जाओगे कि 'यह तो अभी भी मुझे सहन करना पड़ रहा है!' लेकिन कुछ समय तक सहन करना पड़ेगा, उसके बाद आपको कोई दु:ख नहीं रहेगा। लेकिन अभी तो नये सिरे से लाइन बना रहे हो, इसलिए पिछले रिएक्शन तो आएँगे ही। अभी तक जो उल्टा किया था, उसके फल तो आएँगे ही न?

## अंततः उपकार खुद पर ही करना है

कभी किसी पर भी उपकार किया हो, किसी का फायदा किया हो, किसी के लिए जीए हों तो उतना खुद को लाभ होता है, लेकिन वह भौतिक लाभ होता है, उसका भौतिक फल मिलेगा।

**प्रश्नकर्ता :** किसी पर उपकार करने के बजाय खुद पर उपकार करे तो?

**दादाश्री :** बस, खुद पर उपकार करने के लिए ही सबकुछ करना है। यदि खुद पर उपकार करे तो उसका कल्याण हो जाए। लेकिन उसके लिए खुद अपने आपको जानना पड़ेगा, तब तक लोगों पर उपकार करते रहना, लेकिन उसका भौतिक फल मिलता रहेगा। खुद अपने आपको जानने के लिए, 'हम कौन हैं?' वह जानना पड़ेगा। वास्तव में हम खुद शुद्धात्मा हैं। अभी तक तो आप 'मैं चंदूभाई हूँ', उतना ही जानते हो न?

या और भी कुछ जानते हो? 'मैं ही चंदूभाई हूँ', ऐसा कहोगे। 'इसका पति हूँ, इसका मामा हूँ, इसका चाचा हूँ', ऐसी सब श्रृंखलाएँ! ऐसा ही है न? वही ज्ञान आपके पास है न? उससे आगे नहीं गए हैं न?

## मानवसेवा, सामाजिक धर्म

**प्रश्नकर्ता :** लेकिन व्यवहार में ऐसा होता ही है न कि दया भाव रहता है, सेवा रहती है, किसी के प्रति *लागणी* (भावुकतावाला प्रेम, लगाव) रहती है कि 'कुछ कर लूँ'। किसी को नौकरी दिलवानी, बीमार को होस्पिटल में जगह दिलवानी, यानी कि ये सभी क्रियाएँ, वह एक प्रकार का व्यवहार धर्म ही हुआ न?

**दादाश्री :** वे तो सब सामान्य फ़र्ज़ हैं।

**प्रश्नकर्ता :** तो फिर मानवसेवा तो एक व्यवहारिक चीज़ है, ऐसा ही समझें न? वह तो व्यवहार धर्म हुआ न?

**दादाश्री :** वह व्यवहार धर्म भी नहीं है, वह तो समाजधर्म है। जिस समाज के लिए अनुकूल हो, उसके लोगों को अनुकूल पड़ेगा और वही सेवा अगर किसी और समाज को देने जाएँ तो वह प्रतिकूल पड़ेगा। यानी कि व्यवहार धर्म कब कहलाता है कि जो सभी को एक समान लगे, तब! अभी तक आपने जो किया, वह समाजसेवा कहलाती है। हर एक की समाजसेवा अलग-अलग प्रकार की होती है। हर एक समाज अलग प्रकार का है, उसी तरह सेवा भी अलग प्रकार की होती है।

## लोकसेवा, बिगिन्स फ्रोम होम

**प्रश्नकर्ता :** जो लोग लोकसेवा में आए, वे किसलिए आए होंगे?

**दादाश्री :** वह तो भावना अच्छी। लोगों का किस तरह से भला हो, उसकी इच्छा। मनोभाव अच्छा हो तब न!

वह तो भावना-मनोभाव लोगों के प्रति, कि लोगों को जो दुःख

होता है वह नहीं हो, ऐसी भावना है उसके पीछे। बहुत ऊँची भावना है न। पर लोक सेवकों का यह मैंने देखा कि सेवकों के घर जाकर पूछते हैं न, तब पीछे धुआँ निकलता है। इसलिए वह सेवा नहीं है। सेवा घर से शुरू होनी चाहिए। बिगिन्स फ्रोम होम। फिर नेबर्स (पड़ोसी)। बाद में आगे की सेवा। ये तो घर जाकर पूछते हैं तब धुआँ निकलता है। कैसा लगता है आपको? इसलिए शुरुआत घर से होनी चाहिए न?

**प्रश्नकर्ता :** ये भाई कहते हैं कि उनके केस में घर में धुआँ नहीं है।

**दादाश्री :** इसका अर्थ यह हुआ कि वह सच्ची सेवा है।

## करो जनसेवा, शुद्ध नीयत से

**प्रश्नकर्ता :** लोकसेवा करते-करते उसमें भगवान के दर्शन करके सेवा की हो तो वह यथार्थ फल देगी न?

**दादाश्री :** भगवान के दर्शन किए हों, तो फिर लोकसेवा में नहीं पड़ता, क्योंकि भगवान के दर्शन होने के बाद कौन छोड़े भगवान को? यह लोकसेवा तो इसलिए करनी है ताकि भगवान मिलें। लोकसेवा तो हृदय से होनी चाहिए। हृदयपूर्वक हो, तो सब जगह पहुँचेगी। लोकसेवा और प्रख्याति दोनों मिलें, तो मुश्किल में डाल दे मनुष्य को। ख्याति बिना की लोकसेवा हो, तब सच्ची। ख्याति तो होनेवाली ही है, पर ख्याति से इच्छा रहित हो, ऐसा होना चाहिए।

लोग ऐसे नहीं हैं कि जनसेवा करें। यह तो भीतर छुपा हुआ कीर्ति का लोभ है, मान का लोभ है, सब तरह-तरह के लोभ पड़े हैं, वे करवाते हैं। जनसेवा करनेवाले लोग तो कैसे होते हैं? वे अपरिग्रही पुरुष होते हैं। यह तो सब नाम बढ़ाने के लिए। धीरे-धीरे 'किसी दिन मंत्री बनूँगा' ऐसा करके जनसेवा करता है। भीतर नीयत चोर है, इसलिए बाहर की मुश्किलें, बिना काम के परिग्रह, वह सभी बंद कर दो तो सब ठीक हो

जाएगा। यह तो एक ओर परिग्रही, संपूर्ण परिग्रही रहना है और दूसरी ओर जनसेवा चाहिए। ये दोनों कैसे संभव है?

**प्रश्नकर्ता :** अभी तो मैं मानवसेवा करता हूँ, घर-घर सब से भीख माँगकर गरीबों को देता हूँ। इतना मैं करता हूँ अभी।

**दादाश्री :** वह तो सारा आपके खाते में-बहीखाते में जमा होगा। आप जो देते हो न... ना, ना आप जो बीच में करते हो, उसकी रकम निकालेंगे। ग्यारह गुना रकम करके, फिर उसकी जो दलाली है, वह आपको मिलेगी। अगले भव में दलाली मिलेगी और उसकी शांति रहेगी आपको। यह काम अच्छा करते हो इसलिए अभी शांति रहती है और भविष्य में भी रहेगी। वह काम अच्छा है।

बाकी सेवा तो उसका नाम कि तू काम करता हो, तो मुझे पता भी नहीं चले। उसे सेवा कहते हैं। मूक सेवा होती है। पता चले, उसे सेवा नहीं कहते।

सूरत के एक गाँव में हम गए थे। एक आदमी कहने लगा, 'मुझे समाजसेवा करनी है।' मैंने कहा, 'क्या समाजसेवा करेगा तू?' तब कहता है, 'सेठ लोगों के पास से लाकर लोगों में बाँटता हूँ।' मैंने कहा, 'बाँटने के बाद पता लगाता है कि वे कैसे खर्च करते हैं?' तब कहे, 'वह हमें देखने की क्या ज़रूरत?' फिर उसे समझाया कि भैया! मैं तुझे रास्ता दिखाता हूँ, उस तरह कर। सेठ लोगों से पैसा लाता है तो उसमें से उन्हें सौ रुपये का ठेला दिलवा देना। वह हाथ-लारी आती है न, दो पहिये वाली होती है, वह। सौ-डेढ़ सौ या दो सौ रुपये की लारी दिलवा देना और पचास रुपये दूसरे देना और कहना, 'तू साग़-सब्ज़ी लाकर, उसे बेचकर, मुझे मूल रकम रोज़ शाम को वापस दे देना। मुनाफा तेरा और लारी के रोज़ाना इतने पैसे भरते रहना।' इस पर कहने लगा, 'बहुत अच्छा लगा, बहुत अच्छा लगा। आपके फिर से सूरत आने से पहले तो पचास-सौ लोगों को इकट्ठा कर दूँगा।' फिर ऐसा कुछ करो न, अभी लारियाँ

आदि ला दो इन सभी गरीबों को। उन्हें कुछ बड़ा व्यापार करने की ज़रूरत है? एक लारी दिलवा दो, तो शाम तक बीस रुपये कमा लेंगे। आपको कैसा लगता है? उन्हें ऐसा दिलाएँ तो हम पक्के जैन हैं या नहीं? ऐसा है न, अगरबत्ती भी जलते-जलते सुगंध देकर जलती है, नहीं? सारा रूम सुगंधीवाला कर जाती है न! तो क्या हम से सुगंध फैलेगी ही नहीं?

ऐसा क्यों होना चाहिए हम से? मैं तो पच्चीस-तीस वर्ष की उम्र में भी अहंकार करता था और वह भी विचित्र प्रकार का अहंकार करता था। यह व्यक्ति मुझ से मिले और उसको लाभ नहीं हो तो मेरा मिलना गलत था। इसलिए हर एक मनुष्य को मुझ से लाभ प्राप्त हुआ था। मैं मिला और यदि उसको लाभ नहीं हुआ तो किस काम का? आम का पेड़ क्या कहता है कि मुझ से मिला और आम का मौसम हो और यदि सामनेवाले को लाभ नहीं हुआ तो मैं आम ही नहीं। भले ही छोटा हो तो छोटा, तुझे ठीक लगे वैसा, पर तुझे उसका लाभ तो होगा न! वह आम का पेड़ कोई लाभ नहीं उठाता है। ऐसे कुछ विचार तो होने चाहिए न। ऐसा मनुष्यपन क्यों होना चाहिए? यदि ऐसा समझाएँ तो, यों तो सब समझदार हैं फिर। यह तो समझ में आ गया, उसने ऐसा किया, चल पड़ी गाड़ी। आपको क्या लगता है?

**प्रश्नकर्ता :** हाँ, आप बात करते हैं, ऐसी महाजन की संस्था हर जगह थी।

**दादाश्री :** पर अभी तो वे भी मुसीबत में पड़े हैं न! अर्थात् किसी का दोष नहीं है। होना था सो हो गया, पर अब ऐसा विचारों से सुधारें तो अब भी सुधर सकता है और बिगड़े हुए को सुधारना, उसी का नाम ही धर्म है। सुधरे हुए को तो सुधारने तैयार होते ही हैं सभी, पर बिगड़ा उसे सुधारना, वह धर्म कहलाता है।

## मानवसेवा ही प्रभुसेवा

**प्रश्नकर्ता :** मानवसेवा, वह तो प्रभुसेवा है न?

**दादाश्री :** नहीं, प्रभुसेवा नहीं। दूसरों की सेवा कब करते हैं? खुद को भीतर दुःख होता है। आपको किसी मनुष्य पर दया आए, तब उसकी स्थिति देखकर आपको भीतर दुःख होता है और उस दुःख को मिटाने के लिए आप यह सब सेवा करते हैं। अर्थात् यह सब खुद का दुःख मिटाने के लिए है। एक मनुष्य को दया बहुत आती है। वह कहता है कि मैंने दया करके इन लोगों को यह दे दिया, वह दे दिया..., नहीं, अरे, तेरा दुःख मिटाने के लिए इन लोगों को तू देता है। आपको समझ में आई यह बात? बहुत गहन बात है यह, सतही बात नहीं है यह। खुद के दुःख को मिटाने के लिए देता है। पर वह चीज़ अच्छी है। किसी को दोगे तो आप पाओगे फिर।

**प्रश्नकर्ता :** पर जनता जनार्दन की सेवा वही भगवत सेवा है या फिर अमूर्त को मूर्त रूप देकर पूजा करना, वह?

**दादाश्री :** जनता जनार्दन की सेवा करने पर हमें संसार के सभी सुख मिलते हैं, भौतिक सुख, और धीरे-धीरे, स्टेप बाय स्टेप, मोक्ष की तरफ जाते हैं। पर वह हर एक अवतार में ऐसा नहीं होता है। किसी ही अवतार में संयोग मिल जाता है। बाकी, हर एक अवतार में नहीं होता, इसलिए वह सिद्धांत रूप नहीं है।

## ...कल्याण की श्रेणियाँ ही भिन्न

ये जो समाज कल्याण करते हैं, वह जगत् कल्याण नहीं कहलाता। वह तो एक सांसारिक भाव है, वह सब समाज कल्याण कहलाता है। वह जितना जिससे हो पाए उतना करते हैं, वह सब स्थूल भाषा है। और जगत् कल्याण करना वह तो सूक्ष्म भाषा, सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम भाषा है। सिर्फ ऐसे सूक्ष्मतम भाव ही होते हैं या फिर उसके छिंटे ही होते हैं।

## समाजसेवा प्रकृति स्वभाव

समाजसेवा तो, जिसने बीड़ा उठाया है, यानी घर में बहुत ध्यान

नहीं देता, और बाहर लोगों की सेवा में पड़ा हुआ है, वह समाजसेवा कहलाती है। जबकि बाकी के सब तो खुद के आंतरिक भाव कहलाते हैं। ऐसे भाव तो खुद को आते ही रहते हैं। किसी पर दया आए, किसी पर *लागणी* हो वगैरह, ऐसा सब तो खुद की प्रकृति में लेकर ही आया होता है, लेकिन आखिर में यह सारा प्रकृतिधर्म ही है। समाजसेवा भी प्रकृति धर्म है। उसे प्रकृति स्वभाव कहते हैं कि 'इसका स्वभाव ऐसा है, इसका स्वभाव ऐसा है।' किसी का स्वभाव दु:ख देने का होता है, किसी का स्वभाव सुख देने का होता है। इन दोनों के स्वभाव, वे प्राकृतिक स्वभाव कहलाते हैं, आत्मस्वभाव नहीं। प्रकृति में जैसा माल भरा है, वैसा ही उसका माल निकलता है।

## सेवा-कुसेवा, प्राकृत स्वभाव

आप यह जो सेवा कर रहे हो, वह प्रकृति स्वभाव है और कोई व्यक्ति कुसेवा करता है तो, वह भी प्रकृति स्वभाव है। इसमें आपका पुरुषार्थ नहीं है और उसका भी पुरुषार्थ नहीं है, लेकिन मन से ऐसा मानते हैं कि 'मैं कर रहा हूँ।' अब 'मैं कर रहा हूँ' वही भ्रांति है। यहाँ पर 'यह' ज्ञान देने के बाद भी आप सेवा तो करोगे ही, क्योंकि ऐसी प्रकृति लेकर आए हो, लेकिन वह सेवा फिर शुद्ध सेवा होगी। अभी शुभ सेवा हो रही है। शुभ सेवा यानी बंधनवाली सेवा, सोने की बेड़ी, लेकिन बंधन ही है न! इस ज्ञान के बाद सामनेवाले व्यक्ति को भले ही कुछ भी हो लेकिन आपको दु:ख नहीं होगा और उसका दु:ख दूर हो जाएगा। इसके बाद आपको करुणा रहेगी। अभी तो आपको दया रहती है कि बेचारे को कैसा दु:ख हो रहा होगा, कैसा दु:ख हो रहा होगा! उस पर आपको दया आती है। वह दया हमेशा आपको दु:ख देती है। जहाँ दया होती है, वहाँ पर अहंकार रहता ही है। दया भाव के बिना प्रकृति सेवा करती ही नहीं। और इस ज्ञान के बाद आपको करुणा भाव रहेगा।

सेवाभाव का फल भौतिक सुख है और कुसेवाभाव का फल भौतिक

दुःख है। सेवा भाव से खुद का 'मैं' नहीं मिलता। पर जब तक 'मैं' न मिले, तब तक ओब्लाइजिंग नेचर रखना।

## सच्चा समाज सेवक

आप किस की मदद करते हो?

**प्रश्नकर्ता :** समाज की सेवा में बहुत समय देता हूँ।

**दादाश्री :** समाजसेवा तो कई प्रकार की होती हैं। जिस समाजसेवा में... जिसमें किंचित् मात्र भी ऐसा भान नहीं रहे कि 'समाजसेवक हूँ', वही वास्तविक समाजसेवा है।

**प्रश्नकर्ता :** वह बात ठीक है।

**दादाश्री :** बाकी, समाजसेवक तो जगह-जगह पर हर एक विभाग में दो-दो, चार-चार होते हैं। सफेद टोपी डालकर घूमते रहते हैं, समाजसेवक हूँ। पर वह भान भूल जाए, तब वह सच्चा सेवक!

**प्रश्नकर्ता :** कुछ अच्छा काम करें, तो भीतर अहम् आ जाता है कि मैंने किया।

**दादाश्री :** वह तो आ जाता है।

**प्रश्नकर्ता :** तो उसे भुलाने के लिए क्या करना?

**दादाश्री :** पर यह, समाजसेवक हूँ, उसका अहंकार नहीं आना चाहिए। अच्छा काम करता है, तो उसका अहंकार आता है, तो फिर आपके ईष्टदेव या भगवान को जिन्हें मानते हों, उनसे कहना कि 'हे भगवान, मुझे अहंकार नहीं करना है, फिर भी हो जाता है, मुझे क्षमा करना!' इतना ही करना है। होगा इतना?

**प्रश्नकर्ता :** होगा।

**दादाश्री :** इतना करना न!

समाजसेवा का अर्थ क्या? वह काफी कुछ 'माइ' तोड़ देती है। 'माइ' (मेरा) यदि संपूर्ण समाप्त हो जाए तो खुद परमात्मा है! उसे फिर सुख बरतेगा ही न!

## सेवा में अहंकार

**प्रश्नकर्ता :** तो इस जगत् के लिए हमें कुछ भी करने को रहता नहीं है?

**दादाश्री :** आपको करने का था ही नहीं, यह तो अहंकार खड़ा हुआ है। ये मनुष्य अकेले ही अहंकार करते हैं, कर्त्तापन का।

**प्रश्नकर्ता :** ये बहन जी डॉक्टर हैं। एक गरीब 'पेशन्ट' आया, उसके प्रति अनुकंपा होती है, सुश्रूषा करती हैं। आपके कहे अनुसार तो फिर अनुकंपा करने का कोई सवाल ही नहीं रहता है न?

**दादाश्री :** वह अनुकंपा भी कुदरती है, पर फिर अहंकार करता है कि मैंने कैसी अनुकंपा की! अहंकार नहीं करे तो कोई हर्ज नहीं। पर अहंकार किए बगैर रहता नहीं न!

## सेवा में समर्पणता

**प्रश्नकर्ता :** इस संसार की सेवा में परमात्मा की सेवा का भाव रखकर सेवा करें, वह फ़र्ज़ में आता है न?

**दादाश्री :** हाँ, उसका फल पुण्य मिलता है, मोक्ष नहीं मिलता।

**प्रश्नकर्ता :** उसका श्रेय साक्षात्कारी परमात्मा को सौंप दें, फिर भी मोक्ष नहीं मिलेगा?

**दादाश्री :** ऐसे फल सौंप दिया नहीं जाता है न किसी से।

**प्रश्नकर्ता :** मानसिक समर्पण करें तो?

**दादाश्री :** वह समर्पण करे तो भी कोई फल लेता नहीं है और कोई देता भी नहीं है। वे तो सिर्फ बातें ही हैं। सच्चा धर्म तो 'ज्ञानीपुरुष'

आत्मा प्रदान करें, तभी से अपने आप चलता रहता है, और व्यवहार धर्म तो हमें करना पड़ता है। सीखना पड़ता है।

## भौतिक समृद्धि, बाय प्रोडक्शन में

**प्रश्नकर्ता :** भौतिक समृद्धि प्राप्त करने की इच्छा व प्रयत्न आध्यात्मिक विकास में बाधक हैं क्या? अगर बाधक हैं तो कैसे और अगर बाधक नहीं हैं तो कैसे?

**दादाश्री :** भौतिक समृद्धि प्राप्त करनी हो तो हमें इस दिशा में जाना, आध्यात्मिक समृद्धि प्राप्त करनी हो तो इस दूसरी दिशा में जाना। हमें एक दिशा में जाना है, उसके बजाय हम यों दूसरी दिशा में जाएँ तो बाधक होगा या नहीं?

**प्रश्नकर्ता :** हाँ, वह बाधक कहलाएगा!

**दादाश्री :** अर्थात् पूर्णतया बाधक है। आध्यात्मिक यह दिशा है तो भौतिक सामनेवाली दिशा है।

**प्रश्नकर्ता :** पर भौतिक समृद्धि के बिना चले किस तरह?

**दादाश्री :** भौतिक समृद्धि इस दुनिया में कोई कर पाया है क्या? सभी लोग भौतिक समृद्धि के पीछे पड़े हैं। हो गई है किसीकी?

**प्रश्नकर्ता :** थोड़े, कुछ की ही होती है, सभी की नहीं होती।

**दादाश्री :** मनुष्य के हाथ में सत्ता नहीं है वह। जहाँ सत्ता नहीं है, वहाँ व्यर्थ शोर मचाएँ, उसका अर्थ क्या है? मीनिंगलेस!

**प्रश्नकर्ता :** जब तक उसकी कोई कामना है, तब तक अध्यात्म में किस तरह जा सकेंगे?

**दादाश्री :** हाँ, कामना होती है, वह ठीक है। कामना होती है, पर हमारे हाथ में सत्ता नहीं है वह।

**प्रश्नकर्ता :** वह कामना किस तरह मिटे?

**दादाश्री :** उसकी कामना के लिए ऐसा सब आता ही है फिर। आपको उसमें बहुत झंझट नहीं करनी है। आध्यात्मिक करते रहो। यह भौतिक समुद्धि तो बाइ प्रोडक्ट है। आप आध्यात्मिक प्रोडक्शन शुरू करो, इस दिशा में जाओ और आध्यात्मिक प्रोडक्शन शुरू करो तो भौतिक समृद्धियाँ, बाइ प्रोडक्ट, आपको फ्री ऑफ कोस्ट मिलेंगी।

**प्रश्नकर्ता :** अध्यात्म तरह से जाना हो तो, क्या कहना चाहते हो? किस प्रकार जाना?

**दादाश्री :** नहीं, पर पहले यह समझ में आता है कि अध्यात्म का आप प्रोडक्शन करो तो भौतिक बाय प्रोडक्ट है? ऐसा आपकी समझ में आता है?

**प्रश्नकर्ता :** ऐसा मानता हूँ कि आप कहते हैं, वह मुझे समझ में नहीं आता है।

**दादाश्री :** इसलिए मानो तो भी यह सब बाय प्रोडक्ट है। बाय प्रोडक्ट यानी फ्री ऑफ कोस्ट। इस संसार के विनाशी सुख सारे फ्री ऑफ कोस्ट मिले हुए हैं। आध्यात्मिक सुख प्राप्त करने जाते, रास्ते में यह बाय प्रोडक्शन मिला है।

**प्रश्नकर्ता :** हमने ऐसे कई लोग देखे हैं कि जो अध्यात्म में जाते नहीं हैं, पर भौतिक रूप से बहुत समृद्ध हैं और उसमें वे सुखी हैं।

**दादाश्री :** हाँ, वे अध्यात्म में जाते नज़र नहीं आते, मगर उसने जो अध्यात्म किया था, उसका फल है यह।

**प्रश्नकर्ता :** यानी इस जन्म में अध्यात्म करे, तो अगले जन्म में भौतिक सुख मिलेगा?

**दादाश्री :** हाँ, उसका फल अगले भव में मिलेगा आपको। फल दिखता है आज और आज अध्यात्म में नहीं भी हों।

## कार्य का हेतु, सेवा या लक्ष्मी?

हर एक काम का हेतु होता है कि किस हेतु से यह काम किया जा रहा है। उसमें यदि उच्च हेतु नक्की किया जाए, यानी क्या कि यह अस्पताल बनाना है, तो पेशन्ट किस तरह स्वास्थ्य प्राप्त करें, किस प्रकार सुखी हो, किस तरह लोग आनंद में आए, कैसे उनकी जीवनशक्ति बढ़े, ऐसा अपना उच्च हेतु नक्की किया हो और सेवाभाव से ही वह काम किया जाए, तब उसका बाइ प्रोडक्शन क्या? लक्ष्मी। अत: लक्ष्मी तो बाइ प्रोडक्ट है, उसे प्रोडक्शन मत मानना। पूरे जगत् में लक्ष्मी को प्रोडक्शन बना दिया है इसलिए फिर उसे बाइ प्रोडक्शन का लाभ नहीं मिलता।

अत: आप यदि सिर्फ सेवा का भाव ही नक्की करो तो उसके बाइ प्रोडक्शन में तो फिर और अधिक लक्ष्मी आएगी। यानी यदि लक्ष्मी को बाइ प्रोडक्ट में ही रखें तो लक्ष्मी अधिक आती है, लेकिन यह तो लक्ष्मी के हेतु से ही लक्ष्मी के लिए प्रयत्न करते हैं, इसलिए लक्ष्मी नहीं आती। इसलिए आपको यह हेतु बता रहे हैं कि यह हेतु रखना 'निरंतर सेवाभाव।' तो बाइ प्रोडक्ट अपने आप ही आता रहेगा। जिस तरह बाइ प्रोडक्ट में कोई मेहनत नहीं करनी पड़ती, खर्चा नहीं करना पड़ता, वह फ्री ऑफ कॉस्ट होता है, उसी तरह यह लक्ष्मी भी फ्री ऑफ कॉस्ट मिलती है। आपको ऐसी लक्ष्मी चाहिए या *ऑन* (मूल क़ीमत से ज़्यादा में बेचना) की लक्ष्मी चाहिए? *ऑन* की लक्ष्मी नहीं चाहिए? तो फिर अच्छा है! अगर फ्री ऑफ कॉस्ट मिले तो वह कितनी अच्छी!

अत: सेवाभाव नक्की करो, मनुष्य मात्र की सेवा। क्योंकि हमने अस्पताल खोला यानी कि हम जो विद्या जानते हैं, सेवाभाव में उस विद्या का उपयोग करें, वही अपना हेतु होना चाहिए। उसके फलस्वरूप दूसरी चीज़ें फ्री ऑफ कॉस्ट मिलती रहेंगी और फिर लक्ष्मी की कभी भी कमी नहीं पड़ेगी। और जो लक्ष्मी के हेतु से ही करने गए उन्हें नुकसान हुआ है। हाँ, और लक्ष्मी के हेतु से ही कारखाना बनाया, फिर बाइ प्रोडक्ट तो

रहा ही नहीं न! क्योंकि लक्ष्मी खुद ही बाइ प्रोडक्ट है, बाइ प्रोडक्शन का! अत: हमें प्रोडक्शन नक्की करना है, ताकि बाइ प्रोडक्शन फ्री ऑफ कॉस्ट मिलता रहे।

## जगत् कल्याण, वही प्रोडक्शन

आत्मा प्राप्त करने के लिए जो कुछ भी किया जाता है, वह प्रोडक्शन है और उसकी वजह से बाइ प्रोडक्ट मिलता है और संसार की सभी ज़रूरतें पूरी होती हैं। मैं अपना एक ही तरह का प्रोडक्शन रखता हूँ, 'जगत् परम शांति को प्राप्त करे और कुछ मोक्ष को पाएँ।' मेरा यह प्रोडक्शन और उसका बाइ प्रोडक्शन मुझे मिलता ही रहता है। ये चाय-पानी, जैसा आपको मिलता है, हमें उससे कुछ अलग ही प्रकार का मिलता है। उसका क्या कारण है? कि आपकी तुलना में मेरा प्रोडक्शन उच्च कोटि का है। यदि आपका प्रोडक्शन भी उतना ही उच्च कोटि का होगा तो बाइ प्रोडक्शन भी उच्च कोटि का आएगा। हर एक कार्य का हेतु होता है। यदि सेवाभाव का हेतु होगा, तो लक्ष्मी 'बाय प्रोडक्ट' में मिलेगी ही।

## सेवा परोक्ष रूप से भगवान की

बाकी का सारा प्रोडक्शन बाइ प्रोडक्ट होता है, उसमें आपको ज़रूरत की सभी चीज़ें मिलती रहेंगी और वे ईज़िली मिलती रहेंगी। देखो न! यह पैसों का प्रोडक्शन किया है इसलिए आज पैसा ईज़िली नहीं मिलता। भागदौड़। बदहाल घूम रहे हों ऐसा करते हैं और मुँह पर अरंडी का तेल चुपड़कर घूम रहे हों, ऐसे दिखते हैं! घर में अच्छा खाने-पीने का है, कितनी सुविधाएँ हैं, रास्ते कितने अच्छे हैं, रास्ते पर चलें तो पैर धूलवाले नहीं हो जाते! इसलिए मनुष्यों की सेवा करो, मनुष्य में भगवान विराजमान हैं, भगवान भीतर ही बैठे हैं। बाहर भगवान ढूँढने जाओगे तो वे मिलेंगे नहीं।

आप इंसानों के डॉक्टर हो इसलिए आपको इंसानों की सेवा करने को कहता हूँ। जानवरों के डॉक्टर होंगे तो उन्हें जानवरों की सेवा करने

का कहूँगा। जानवरों में भी भगवान विराजमान हैं। लेकिन इन मनुष्यों में भगवान विशेष रूप से प्रकट हुए हैं!

## सेवा-परोपकार से आगे मोक्षमार्ग

**प्रश्नकर्ता :** मोक्षमार्ग, समाजसेवा के मार्ग से बढ़कर कैसे है? यह ज़रा समझाइए।

**दादाश्री :** समाज सेवक से हम पूछें कि आप कौन है? तब कहें, मैं समाजसेवक हूँ। क्या कहता है? यही कहता है न या दूसरा कुछ कहता है?

**प्रश्नकर्ता :** यही कहता है।

**दादाश्री :** यानी 'मैं समाज सेवक हूँ', बोलना, वह इगोइज़म है और इस व्यक्ति से कहूँ कि, 'आप कौन है?' तब कहेंगे, 'बाहर पहचान के लिए चंदू भाई और वास्तव में तो मैं शुद्धात्मा हूँ।' तो वह बिना इगोइज़म का है, विदाउट इगोइज़म।

समाज सेवक का इगो (अहंकार) अच्छे कार्य के लिए है, पर है इगो। बुरे कार्य के लिए इगो हो, तब 'राक्षस' कहलाता है। अच्छे कार्य के लिए इगो हो, तब देव कहलाता है। इगो यानी इगो। इगो यानी भटकते रहना और इगो खतम हो गया, तो फिर यहीं मोक्ष हो जाए।

## 'मैं कौन हूँ' जानना, वह धर्म

**प्रश्नकर्ता :** हर एक जीव को क्या करना चाहिए? उसका धर्म क्या है?

**दादाश्री :** जो कर रहा है, वह उसका ही धर्म है। पर हम कहते हैं कि मेरा धर्म, इतना ही। जिसका हम इगोइज़म करते हैं कि यह मैंने किया। इसलिए हमें अब क्या करना चाहिए कि 'मैं कौन हूँ' इतना जानना, उसके लिए प्रयत्न करना, तो सारे पज़ल सॉल्व हो जाएँगे। फिर पज़ल खड़ा नहीं होगा और पज़ल खड़ा नहीं हो, तो स्वतंत्र होने लगें।

## लक्ष्मी, वह तो बाय प्रोडक्शन में

**प्रश्नकर्ता :** कर्तव्य तो हर एक व्यक्ति का होता ही है, फिर वकील हो या डॉक्टर, लेकिन कर्तव्य तो यही होता है कि 'मनुष्य मात्र का अच्छा करूँ।'

**दादाश्री :** हाँ, लेकिन यह तो 'अच्छा करना है' ऐसी गाँठ बाँधे बिना बस करता ही रहता है, कोई भी डिसीज़न नहीं लिया है। कोई भी हेतु निश्चित किए बगैर यों ही गाड़ी चलती रहती है। कौन से शहर जाना है, उसका ठिकाना नहीं और कौन से शहर में उतरना है, उसका भी ठिकाना नहीं है। रास्ते में कहाँ पर चाय-नाश्ता करना है, उसका भी ठिकाना नहीं है। बस, दौड़ता ही रहता है। इसलिए सबकुछ उलझ गया है। हेतु निश्चित करने के बाद ही सारे कार्य करने चाहिए।

हमें तो सिर्फ हेतु ही बदलना है, और कुछ नहीं करना है। पंप के इंजन का एक पट्टा उधर लगा दें तो पानी निकलता है और पट्टा इस तरफ लगा दें तो डांगर में से चावल निकलते हैं। यानी सिर्फ पट्टा देने में ही फर्क है। हेतु निश्चित करना है और वह हेतु फिर हमारे लक्ष्य में रहना चाहिए। बस, और कुछ भी नहीं। लक्ष्मी लक्ष्य में रहनी ही नहीं चाहिए।

## 'खुद की' सेवा में समाए सर्व धर्म

दो प्रकार के धर्म, तीसरे प्रकार का कोई धर्म नहीं होता। जिस धर्म में जगत् की सेवा है, वह एक प्रकार का धर्म और जहाँ खुद की (स्व की-आत्मा की) सेवा है, वह दूसरे प्रकार का धर्म। खुद की सेवा वाले होम डिपार्टमेन्ट में (आत्मस्वरूप में) जाए और इस संसार की सेवा करे, उसे उसका संसारी लाभ मिलता है या भौतिक मज़े करते हैं। और जिसमें जगत् की किसी भी प्रकार की सेवा समाती नहीं, जहाँ खुद की सेवा का समावेश नहीं होता है, वे सारे एक तरह के सामाजिक भाषण हैं! और खुद अपने को भयंकर नशा चढ़ानेवाले हैं। जगत् की कोई भी सेवा होती हो, तो वहाँ धर्म है। जगत् की सेवा न हो, तो खुद की सेवा करो। जो

खुद की सेवा करता है, वह जगत् की सेवा करने से भी बढ़कर है। क्योंकि खुद की सेवा करनेवाला किसी को भी दुःख नहीं देता!

**प्रश्नकर्ता :** पर खुद की सेवा करने का सूझना चाहिए न?

**दादाश्री :** वह सूझना आसान नहीं है।

**प्रश्नकर्ता :** वह कैसे करें?

**दादाश्री :** वह तो खुद की सेवा करते हों, ऐसे ज्ञानीपुरुष से पूछना कि साहेब, आप औरों की सेवा करते हैं या खुद की? तब साहेब कहें कि, 'हम खुद की करते हैं।' तब हम उनसे कहें, 'मुझे ऐसा रास्ता दिखाइए!'

## 'खुद की सेवा' के लक्षण

**प्रश्नकर्ता :** खुद की सेवा के लक्षण कौन से हैं?

**दादाश्री :** 'खुद की सेवा' अर्थात् किसी को दुःख न दे, वह सब से पहला लक्षण। उसमें सभी चीज़ें आ जाती हैं। उसमें वह अब्रह्मचर्य का भी सेवन नहीं करता। अब्रह्मचर्य का सेवन करना मतलब किसी को दुःख देने के समान है। अगर ऐसा मानो कि राज़ी-खुशी से अब्रह्मचर्य हुआ हो, तब भी उसमें कितने जीव मर जाते हैं! इसलिए वह दुःख देने के समान है। इसलिए उससे सेवा ही बंद हो जाती है। फिर झूठ नहीं बोलते, चोरी नहीं करते, हिंसा नहीं करते, धन जमा नहीं करते। परिग्रह करना, पैसे इकट्ठे करना वह हिंसा ही है। इसलिए दूसरों को दुःख देता है, इसमें सब आ जाता है।

**प्रश्नकर्ता :** खुद की सेवा के दूसरे लक्षण कौन-कौन से हैं? खुद की सेवा कर रहा है, ऐसा कब कहलाता है?

**दादाश्री :** 'खुद की सेवा' करनेवाले को भले ही इस संसार के सारे लोग दुःख दें, पर वह किसी को भी दुःख नहीं देता। दुःख तो देता

ही नहीं, पर बुरे भाव भी नहीं करता कि तेरा बुरा हो! 'तेरा भला हो' ऐसे कहता है।

हाँ, फिर भी सामनेवाला बोले तो हर्ज नहीं है। सामनेवाला बोले कि आप नालायक हो, बदमाश हो, आप दुःख देते हो, उसका हमें हर्ज नहीं। हम क्या करते हैं, यही देखना है। सामनेवाला तो रेडियो की तरह बोलता ही रहेगा, जैसे रेडियो बज रहा हो वैसा!

**प्रश्नकर्ता :** जीवन में सभी लोग हमें दुःख दें, फिर भी हम सहन करें, ऐसा तो हो नहीं सकता। घर के लोग ज़रा सा अपमानजनक वर्तन करें, वह भी सहन नहीं होता तो?

**दादाश्री :** तब क्या करना? इसमें न रहें तो किस में रहें? यह बताओ मुझे। यह जो मैं कहता हूँ, वह लाइन पसंद नहीं आए तो उस व्यक्ति को किस में रहना चाहिए? सेफसाइड वाली है कोई जगह? कोई हो तो मुझे दिखाओ।

**प्रश्नकर्ता :** नहीं, ऐसा नहीं। पर हमारा 'इगो' तो है ही न?

**दादाश्री :** जन्म से ही सभी में 'इगो' ही रोकता है, पर हमें अटकना नहीं है। 'इगो' है, वह चाहे जैसे नाचे। 'हमें' नाचने की ज़रूरत नहीं है। हम उससे अलग हैं।

## उसके सिवाय दूसरे सभी धार्मिक मनोरंजन

अर्थात् दो ही धर्म हैं, तीसरा धर्म नहीं। दूसरे तो ओर्नामेन्ट हैं! ओर्नामेन्ट पोर्शन और लोग 'वाह-वाह' करते हैं!

जहाँ सेवा नहीं है, किसी भी प्रकार की सेवा नहीं है, जगत् सेवा नहीं है, वे सब धार्मिक मनोरंजन हैं और ओर्नामेन्टल पोर्शन हैं सभी।

बुद्धि का धर्म तब तक स्वीकारा जाता है, जब तक बुद्धि सेवाभावी हो, जीवों को सुख पहुँचाने वाली हो, ऐसी बुद्धि हो वह अच्छी। बाकी

दूसरी बुद्धि बेकार है। उल्टा दूसरी सब बुद्धि तो बाँधती है। बाँधकर मार खिलाती रहती है और जहाँ देखो, वहाँ फायदा-नुकसान देखती है। बस में घुसते ही पहले देख ले कि जगह कहाँ है? इस तरह बुद्धि यहाँ-वहाँ भटकाती रहती है। दूसरों की सेवा करे, वह बुद्धि अच्छी। नहीं तो खुद की सेवा जैसी बुद्धि और कोई नहीं। जो खुद की सेवा करता है, वह सारे संसार की सेवा कर रहा है।

## जगत् में किसी को दुःख नहीं हो

इसलिए हम सभी से कहते हैं कि भई! सुबह पहले बाहर निकलते समय और कुछ नहीं आता हो तो इतना बोलना 'मन-वचन-काया से इस जगत् में किसी भी जीव को किंचित् मात्र दुःख न हो।' ऐसे पाँच बार बोलकर निकलना। बाकी ज़िम्मेदारी मेरी! जा, दूसरा कुछ नहीं आएगा तो मैं देख लूँगा! इतना बोलना न! फिर किसी को दुःख हो गया, वह मैं देख लूँगा। पर इतना तू बोलना। इसमें हर्ज है?

**प्रश्नकर्ता :** इसमें कोई हर्ज नहीं है।

**दादाश्री :** तू बोलना ज़रूर। तब वह कहें कि 'मुझसे दुःख दे दिया जाए तो?' वह तुझे नहीं देखना है। वह मैं हाईकोर्ट में सब कर लूँगा। वह वकील को देखना है न? वो मैं कर दूँगा सब। तू मेरा यह वाक्य बोलना न सुबह में पाँच बार! हर्ज है इसमें? कुछ कठिनाई है इसमें? सच्चे दिल से 'दादा भगवान' को याद करके बोले न, फिर हर्ज क्या है?

**प्रश्नकर्ता :** हम ऐसा ही करते हैं।

**दादाश्री :** बस, वही करना। दूसरा कुछ करने जैसा नहीं है इस दुनिया में।

## संक्षिप्त में, व्यवहार धर्म

संसार के लोगों को व्यवहार धर्म सिखाने के लिए हम कहते हैं कि

परानुग्रही बन। खुद के लिए विचार ही न आए। लोक कल्याण के लिए परानुग्रही बन। यदि अपने खुद के लिए तू खर्च करेगा तो वह गटर में जाएगा और औरों के लिए कुछ भी खर्च करना वह आगे का एडजस्टमेन्ट है।

शुद्धात्मा भगवान क्या कहते हैं कि जो दूसरों का सँभालता है, उसका मैं सँभाल लेता हूँ और जो खुद का ही सँभालता है, उसका मैं उसी के ऊपर छोड़ देता हूँ।

संसार का काम करो, आपका काम होता ही रहेगा। जगत् का काम करोगे तो आपका काम अपने आप होता रहेगा और तब आपको हैरानी होगी।

संसार का स्वरूप कैसा है? जगत् के जीव मात्र में भगवान रहे हुए हैं, इसलिए किसी भी जीव को कुछ भी त्रास दोगे, दुःख दोगे तो अधर्म खड़ा होगा। किसी भी जीव को सुख दोगे तो धर्म खड़ा होगा। अधर्म का फल आपकी इच्छा के विरुद्ध है और धर्म का फल आपकी इच्छानुसार है।

'रिलेटिव धर्म' है, वह संसार मार्ग है, समाजसेवा का मार्ग है। मोक्षमार्ग समाजसेवा से परे है, स्व-रमणता का है।

## धर्म की शुरुआत

मनुष्य ने जब से किसी को सुख पहुँचाना शुरू किया तब से धर्म की शुरुआत हुई। खुद का सुख नहीं, लेकिन सामनेवाले की अड़चन कैसे दूर हो, यही रहा करे वहाँ से कारुण्यता की शुरुआत होती है। हमें बचपन से ही सामनेवाले की अड़चन दूर करने की पड़ी थी। खुद के लिए विचार भी नहीं आए, वह कारुण्यता कहलाती है। उससे ही 'ज्ञान' प्रकट होता है।

रिटायर होनेवाला हो, तब ओनरी प्रेसिडन्ट होता है। ओनरी वह होता है। अरे, मुए! आफतें क्यों मोल ले रहा है? अब रिटायर होनेवाला है, तब भी? आफतें ही खड़ी करता है। ये सभी आफतें खड़ी की हैं।

और यदि सेवा नहीं हो पाए तो किसी को दु:ख न हो ऐसा देखना चाहिए। भले ही नुकसान कर गया हो। क्योंकि वह पूर्व का कुछ हिसाब होगा। पर हमें उसे दु:ख नहीं हो ऐसा करना चाहिए।

## बस, यही सीखने जैसा

**प्रश्नकर्ता :** दूसरों को सुख देकर सुखी होना वह?

**दादाश्री :** हाँ, बस इतना ही सीखना न! दूसरा सीखने जैसा ही नहीं है। दुनिया में और कोई धर्म ही नहीं है। यह इतना ही धर्म है, दूसरा कोई धर्म नहीं है। दूसरों को सुख दो, उसमें ही सुखी होओगे।

यह आप व्यापार-धंधा करते हो, तब कुछ कमाते हों, तो किसी गाँव में कोई दु:खी हो तो उसे थोड़ा अनाज-पानी दे दें, बेटी ब्याहते समय कुछ रकम दे दें। ऐसे उसकी गाड़ी राह पर ला देनी चाहिए न! किसी के दिल को ठंडक पहुँचाएँ, तो भगवान हमारे दिल को ठंडक देगा।

## ज्ञानी दें, गारन्टी लेख

**प्रश्नकर्ता :** दिल को ठंडक पहुँचाने जाएँ तो आज जेब कट जाती है।

**दादाश्री :** जेब भले ही कट जाए। वह पिछला हिसाब होगा, जो चुक रहा है। पर आप अभी ठंडक देंगे तो उसका फल तो आएगा ही, उसकी सौ प्रतिशत गारन्टी लेख भी कर दूँ। यह हमने दिया होगा, इसलिए हमें आज सुख आता है। मेरा धंधा ही यह है कि सुख की दुकान खोलनी। हमें दु:ख की दुकान नहीं खोलनी है। सुख की दुकान, फिर जिसे चाहिए वह सुख ले जाए और कोई दु:ख देने आए तो हम कहें, 'ओहोहो, अभी बाकी है मेरा। लाओ, लाओ।' उसे हम एक और रख छोड़ें। अर्थात् दु:ख देने आएँ तो ले लें। हमारा हिसाब है, तो देने तो आएँगे न? नहीं तो मुझे तो कोई दु:ख देने आता नहीं है।

इसलिए सुख की दुकान ऐसी खोलो कि बस सभी को सुख देना

है। दुःख किसी को देना नहीं और दुःख देनेवाले को तो किसी दिन कोई चाकू मार देता है न? वह राह देखकर बैठा होता है। यह जो बैर की वसूली करते हैं न, वे यों ही बैर वसूल नहीं करते। दुःख का बदला लेते हैं।

## सेवा करे तो सेवा मिलती है

इस दुनिया में सर्व प्रथम सेवा करने योग्य साधन हों, तो वे हैं माँ बाप।

माँ-बाप की सेवा करें, तो शांति जाती नहीं है। लेकिन आज सच्चे दिल से माँ-बाप की सेवा नहीं करते हैं। तीस साल का हुआ और 'गुरु' (पत्नी) आए। वे कहते हैं कि मुझे नये घर में ले जाओ। गुरु देखे हैं आपने? पच्चीसवें, तीसवें साल में 'गुरु' मिल आते हैं और 'गुरु' मिले, तो बदल जाता है। गुरु कहें कि माताजी को आप पहचानते ही नहीं। वह एक बार नहीं सुनता। पहली बार तो नहीं सुनता पर दो-तीन बार कहे, तो फिर पटरी बदल लेता है।

बाकी, माँ-बाप की शुद्ध सेवा करे न, उसे अशांति नहीं होती ऐसा यह जगत् है। यह जगत् कुछ निकाल फेंकने जैसा नहीं है। तब लोग पूछते हैं न, लड़कों का ही दोष न, लड़के सेवा नहीं करते माँ-बाप की। उसमें माँ-बाप का क्या दोष? मैंने कहा कि उन्होंने माँ-बाप की सेवा नहीं की थी, इसलिए उन्हें प्राप्त नहीं होती। अर्थात् यह विरासत ही गलत है। अब नये सिरे से विरासत के रूप में चले तो अच्छा होगा।

इसलिए मैं ऐसा करवाता हूँ, हर एक घर में। लड़के सभी ऑलराइट हो गए है। माँ-बाप भी ऑलराइट और लड़के भी ऑलराइट!

बुज़ुर्गों की सेवा करने से अपना यह विज्ञान विकसित होता है। कहीं मूर्तियों की सेवा होती है? मूर्तियों के क्या पैर दुखते हैं? सेवा तो अभिभावक हों, बुज़ुर्ग या गुरु हों, उनकी करनी होती है।

## सेवा का तिरस्कार करके, धर्म कर सकते हैं?

माँ-बाप की सेवा करना वह धर्म है। वह तो चाहे कैसे भी हिसाब हो, पर यह सेवा करना हमारा धर्म है और जितना हमारे धर्म का पालन करेंगे, उतना सुख हमें उत्पन्न होगा। बुज़ुर्गों की सेवा तो होती है, साथ-साथ सुख भी उत्पन्न होता है। माँ-बाप को सुख देने से हमें सुख मिलता है। जो माँ-बाप को सुखी रखते हैं, वे लोग सदैव... कभी भी दु:खी नहीं होते।

एक व्यक्ति मुझे एक बड़े आश्रम में मिले। मैंने पूछा, 'आप यहाँ कहाँ से?' तब उसने कहा कि मैं इस आश्रम में पिछले दस साल से रहता हूँ।' तब मैंने उनसे कहा, 'आपके माँ-बाप गाँव में अंतिम अवस्था में गरीबी से बहुत दु:खी हो रहे हैं।' इस पर उसने कहा कि, 'उसमें मैं क्या करूँ? मैं उनका करने जाऊँ तो मेरा धर्म करना रह जाएगा।' इसे धर्म कैसे कहेंगे? धर्म तो उसे कहेंगे कि माँ-बाप से बात करें, भाई से बात करें, सभी से बात करें। व्यवहार आदर्श होना चाहिए। जो व्यवहार खुद के धर्म का तिरस्कार करे, माँ-बाप के संबंध का तिरस्कार करे, उसे धर्म कैसे कहेंगे?

आपके माँ-बाप हैं या नहीं?

**प्रश्नकर्ता :** माँ है।

**दादाश्री :** अब सेवा करना, अच्छी तरह। बार-बार लाभ नहीं मिलेगा और कोई मनुष्य कहे कि, 'मैं दु:खी हूँ' तो मैं कहूँगा कि तेरे माता-पिता की सेवा कर, अच्छी तरह से। तो सांसारिक दु:ख तुझ पर नहीं आएँगे। भले ही पैसेवाला नहीं बनेगा, पर दु:ख तो नहीं पड़ेगा। धर्म तो होना चाहिए। इसे धर्म ही कैसे कहें? मैंने भी माता जी की सेवा की थी। बीस साल की उम्र थी अर्थात् युवावस्था थी। इसलिए माँ की सेवा हो पाई। पिता जी को कंधा देकर ले गया था, उतनी सेवा हुई थी। फिर हिसाब मिल गया कि ऐसे तो कितने पिता जी हो चुके, अब क्या करें? तब जवाब आया, 'जो हैं, उनकी सेवा कर।' फिर जो चले गए, वे गोन। पर

अभी तो जो हैं, उनकी सेवा कर, यदि नहीं हैं तो चिंता मत करना। बहुत से हो गए। जहाँ से भूले, वापस वहाँ से गिनो। माँ-बाप की सेवा, वह प्रत्यक्ष नकद है। भगवान दिखाई नहीं देते, ये तो दिखाई देते हैं। भगवान कहाँ दिखाई देते हैं? जबकि माँ-बाप तो दिखाई देते हैं।

## वास्तव में ज़रूरत है बुज़ुर्गों को सेवा की

अभी तो यदि कोई ज़्यादा से ज़्यादा दुःखी है तो वे हैं, एक तो साठ-पैंसठ वर्ष की उम्र के बूढ़े लोग। बहुत दुःखी हैं आज कल। पर वे किसे कहें? बच्चे सुनते नहीं। दूरियाँ बहुत हो गई हैं, पुराना ज़माना और नया ज़माना। बूढ़ा पुराना ज़माना छोड़ता नहीं है। मार खाता है, फिर भी नहीं छोड़ता।

**प्रश्नकर्ता :** पैंसठ साल में हर एक की यही हालत रहती है न!

**दादाश्री :** हाँ, वैसी की वैसी हालत। यही का यही हाल। इसलिए वास्तव में करने जैसा क्या है इस ज़माने में? कि किसी जगह ऐसे बुज़ुर्गों के लिए यदि रहने का स्थान बनाया जाए तो बहुत अच्छा। इसलिए हमने सोचा था। मैंने कहा, यदि ऐसा कुछ करें न, तो पहले यह ज्ञान दे दें। फिर उनके खाने-पीने की व्यवस्था तो यहाँ हम पब्लिक को और अन्य सामाजिक संस्था को सौंप देंगे तो चले। पर यदि यह ज्ञान दे दिया हो तो वे दर्शन करते रहेंगे तो भी काम चलता रहेगा। और यह ज्ञान दिया हो तो शांति रहेगी बेचारों को, नहीं तो किस आधार पर शांति रहे? आपको कैसा लगता है?

**प्रश्नकर्ता :** हाँ, ठीक है।

**दादाश्री :** पसंद आए ऐसी बात है या नहीं?

वृद्धावस्था और साठ-पैसठ की उम्र का व्यक्ति हो और घर में रहता हो और कोई उसे कुछ माने ही नहीं, तो फिर क्या होगा? मुँह से बोल

नहीं पाएँ और मन में उलटे कर्म बाँधे। इसलिए इन लोगों ने जो वृद्धाश्रमों की व्यवस्था की है, वह व्यवस्था कुछ गलत नहीं है। हेल्पिंग है। पर उसके लिए वृद्धाश्रम नहीं, पर कोई सम्मानसूचक शब्द, ऐसा शब्द होना चाहिए कि सम्माननीय लगे।

## सेवा से जीवन में सुख-संपत्ति

पहली माँ-बाप की सेवा, जिसने जन्म दिया उनकी। फिर गुरु की सेवा। गुरु और माँ-बाप की सेवा तो अवश्य होनी चाहिए। यदि गुरु अच्छे नहीं हों, तो सेवा छोड़ देनी चाहिए।

**प्रश्नकर्ता :** अभी माँ-बाप की सेवा नहीं करते हैं, उसका क्या? तो कौन सी गति होती है?

**दादाश्री :** माँ-बाप की सेवा नहीं करें वे इस जन्म में सुखी नहीं होते हैं। माँ-बाप की सेवा करने का प्रत्यक्ष उदाहरण क्या? तब कहें कि सारी ज़िन्दगी पर्यंत दु:ख नहीं आता। अड़चनें भी नहीं आतीं, माँ-बाप की सेवा से।

हमारे हिन्दुस्तान का विज्ञान तो बहुत सुंदर था। इसलिए तो शास्त्रकारों ने प्रबंध किया था कि माँ-बाप की सेवा करना ताकि आपको ज़िन्दगी में कभी धन का दु:ख न पड़े। अब वह न्यायसंगत होगा या नहीं, यह बात अलग है, मगर माँ-बाप की सेवा अवश्य करने योग्य है। क्योंकि यदि आप सेवा नहीं करोगे, तो आप किसकी सेवा पाओगे? आपकी आनेवाली पीढ़ी कैसे सीखेगी कि आप सेवा करने लायक हो? बच्चे सब देखते हैं। वे देखेंगे कि हमारे फादर ने कभी उनके बाप की सेवा नहीं की है! फिर संस्कार तो नहीं ही पड़ेंगे न?

**प्रश्नकर्ता :** मेरा तात्पर्य यह था कि पुत्र का पिता के प्रति फ़र्ज़ क्या है?

**दादाश्री :** पुत्रों को पिता के प्रति फ़र्ज़ अदा करना चाहिए और पुत्र

यदि फ़र्ज़ अदा करें, तो उन्हें फायदा क्या मिलेगा? जो पुत्र माँ-बाप की सेवा करेंगे, उन्हें कभी भी पैसों की कमी नहीं रहेगी, उनकी सारी ज़रूरतें पूरी होंगी और गुरु की सेवा करे, वह मोक्ष पाता है। पर आज के लोग माँ-बाप या गुरु की सेवा ही नहीं करते न? वे सभी लोग दुःखी होनेवाले हैं।

## महान उपकारी, माँ-बाप

जो मनुष्य माँ-बाप का दोष देखे, उनमें कभी बरकत ही नहीं आती। पैसेवाला बने शायद, पर उसकी आध्यात्मिक उन्नति कभी नहीं होती। माँ-बाप के दोष नहीं देखने चाहिए। उपकार तो भूल ही कैसे सकते हैं? किसी ने चाय पिलाई हो, तो उसका उपकार नहीं भूलते तो हम माँ-बाप का उपकार किस तरह से भूल सकते हैं? तू समझ गया? हं... अर्थात् बहुत उपकार मानना चाहिए। बहुत सेवा करना, मदर-फादर की बहुत सेवा करनी चाहिए।

इस दुनिया में तीन का महान उपकार है। उस उपकार को छोड़ना ही नहीं है। फादर-मदर और गुरु का! हमें जो रास्ते पर ले आए हों उनका, इन तीनों का उपकार भुलाया जाए ऐसा नहीं है।

## 'ज्ञानी' की सेवा का फल

हमारा सेव्य पद गुप्त रखकर सेवक भाव से हमें काम करना है। 'ज्ञानीपुरुष' तो सारे 'वर्ल्ड' के सेवक और सेव्य कहलाते हैं। सारे संसार की सेवा भी 'मैं' ही करता हूँ और सारे संसार की सेवा भी 'मैं' लेता हूँ। यह यदि तेरी समझ में आ जाए तो तेरा काम निकल जाए, ऐसा है।

'हम' यहाँ तक की ज़िम्मेदारी लेते हैं कि कोई मनुष्य हमसे मिलने आया हो तो उसे 'दर्शन' का लाभ प्राप्त होना ही चाहिए। कोई 'हमारी' सेवा करे तो हमारे सिर उसकी ज़िम्मेदारी आ जाती है और हमें उसे मोक्ष में ले ही जाना पड़ता है।

**जय सच्चिदानंद**

# दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा प्रकाशित हिन्दी पुस्तकें

1. आत्मसाक्षात्कार
2. ज्ञानी पुरुष की पहचान
3. सर्व दुःखों से मुक्ति
4. कर्म का सिद्धांत
5. आत्मबोध
6. मैं कौन हूँ ?
7. पाप-पुण्य
8. भुगते उसी की भूल
9. एडजस्ट एवरीव्हेयर
10. टकराव टालिए
11. हुआ सो न्याय
12. चिंता
13. क्रोध
14. प्रतिक्रमण ( सं, ग्रं )
16. दादा भगवान कौन ?
17. पैसों का व्यवहार ( सं, ग्रं )
19. अंतःकरण का स्वरूप
20. जगत कर्ता कौन ?
21. त्रिमंत्र
22. भावना से सुधरे जन्मोंजन्म
23. चमत्कार
24. प्रेम
25. समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य ( सं, पू, उ )
28. दान
29. मानव धर्म
30. सेवा-परोपकार
31. मृत्यु समय, पहले और पश्चात्
32. निजदोष दर्शन से... निर्दोष
33. पति-पत्नी का दिव्य व्यवहार ( सं )
34. क्लेश रहित जीवन
35. गुरु-शिष्य
36. अहिंसा
37. सत्य-असत्य के रहस्य
38. वर्तमान तीर्थंकर श्री सीमंधर स्वामी
39. माता-पिता और बच्चों का व्यवहार ( सं )
40. वाणी, व्यवहार में... ( सं )
41. कर्म का विज्ञान
42. सहजता
43. आप्तवाणी - 1
44. आप्तवाणी - 2
45. आप्तवाणी - 3
46. आप्तवाणी - 4
47. आप्तवाणी - 5
48. आप्तवाणी - 6
49. आप्तवाणी - 7
50. आप्तवाणी - 8
51. आप्तवाणी - 9
52. आप्तवाणी - 13 ( पू, उ )
54. आप्तवाणी - 14 ( भाग-1 )
55. ज्ञानी पुरुष ( भाग-1 )

( सं - संक्षिप्त, ग्रं - ग्रंथ, पू - पूर्वार्ध, उ - उत्तरार्ध )

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा गुजराती भाषा में भी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई है। वेबसाइट **www.dadabhagwan.org** पर से भी आप ये सभी पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं।

★ दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा हर महीने हिन्दी, गुजराती तथा अंग्रेजी भाषा में ''दादावाणी'' मैगेज़ीन प्रकाशित होता है।

## संपर्क सूत्र

### दादा भगवान परिवार


**अडालज** : **त्रिमंदिर**, सीमंधर सिटी, अहमदाबाद-कलोल हाईवे,
पोस्ट : अडालज, जि.-गांधीनगर, गुजरात - 382421
फोन : 9328661166/9328661177
E-mail : info@dadabhagwan.org

**मुंबई** : **त्रिमंदिर,** ऋषिवन, काजुपाडा, बोरिवली (E)
फोन : 9323528901

| | | | |
|---|---|---|---|
| **दिल्ली** | : 9810098564 | **बेंगलूर** | : 9590979099 |
| **कोलकता** | : 9830080820 | **हैदराबाद** | : 9885058771 |
| **चेन्नई** | : 7200740000 | **पूणे** | : 7218473468 |
| **जयपुर** | : 8890357990 | **जलंधर** | : 9814063043 |
| **भोपाल** | : 6354602399 | **चंडीगढ़** | : 9780732237 |
| **इन्दौर** | : 6354602400 | **कानपुर** | : 9452525981 |
| **रायपुर** | : 9329644433 | **सांगली** | : 9423870798 |
| **पटना** | : 7352723132 | **भुवनेश्वर** | : 8763073111 |
| **अमरावती** | : 9422915064 | **वाराणसी** | : 9795228541 |

**U.S.A.** : **DBVI Tel. :** +1 877-505-DADA (3232),
**Email :** info@us.dadabhagwan.org

**U.K.** : +44 330-111-DADA (3232)

**Kenya** : +254 722 722 063

**UAE** : +971 557316937

**Dubai** : +971 501364530

**Australia** : +61 421127947

**New Zealand** : +64 21 0376434

**Singapore** : +65 81129229


**www.dadabhagwan.org**

## सेवा के फल

जगत् का काम करो, आपका काम होता ही रहेगा। जगत् का काम करोगे तो आपका काम अपने आप ही होता रहेगा और तब आपको आश्चर्य होगा।

जब से मनुष्य ने किसी को सुख देना शुरू किया, तब से धर्म की शुरूआत हुई। जब से ऐसा रहे कि खुद का सुख नहीं, पर सामनेवाले की अड़चन कैसे दूर हो, तभी से कारुण्यता की शुरूआत होती है। हमें बचपन से ही सामनेवालो की अड़चन दूर करने की इच्छा रही है। खुद के लिए विचार तक नहीं आता, वह कारुण्यता कहलाती है। उसीसे 'ज्ञान' प्रकट होगा।

– दादाश्री

dadabhagwan.org

ISBN 978-93-86289-71-1

Printed in India

Price ₹15